ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 128-129
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- III, Issues-29, YEAR- July-Sept.-2023

उ0प्र0 की कला परम्परा एवं कला शिक्षा संस्थान

नीतम कुशवाहा
असि0 प्रोफेसर–चित्रकला विभाग, श्री काशीराज महाविद्यालय, इण्टर कालेज, औराई, भदोही (उ0प्र0), भारत

Received-21.08.2023, Revised-27.08.2023, Accepted-02.09.2023 E-mail: sadneet@gmail.com

सारांशः आज तक का मानव विकास इस बात की ओर संकेत करता है कि इस धरती पर प्रथम मानव ने जब पर्दापण किया होगा तो वह अपने को इस जगत को और इस ब्रह्माण्ड को जानने व समझने के लिए व्याकुल हो उठा हागेा। आज की सभ्यता, सस्कृति, कला, ज्ञान और विज्ञान का विकास इसी व्याकुलता का परिणाम है। जिस प्रकार पीड़ा मनुष्य को जन्म देती है। उसी प्रकार मानव की अपने और इस ब्रह्माण्ड को समझने की पीड़ा ने आज की सभ्यता और संस्कृति को जन्म दिया है। हमारी सभ्यता और संस्कृति ही हमारी कलात्मक धरोहर है।

कुंजीभूत शब्द– पर्दापण, ब्रह्माण्ड, सभ्यता, संस्कृति, कला, ज्ञान, विज्ञान, याकुलता, कलात्मक धरोहर, अस्थायित्व, कुशलता।

प्राचीन काल से लेकर आज तक मनुष्य ने जिस तरह से देशकाल को निभाते हुये विभिन्न अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों में विकास किया है, उसका निरन्तर परिणाम प्राचीन काल से लेकर आज तक की कला में देखने को मिलता है। मानव जब इस दृश्यमान जगत से अवगत होता है, तो उसे इस संसार में अनेको विविधताएँ अस्थायित्व और परिवर्तन का बोध होता है। दृश्यमान जगत का बोध होना एक आन्तरिक प्रक्रिया है, जिसे बाह्य रूप में लाने के लिए मानव को एक दृश्यगत ढांचें की आवश्यकता होती है। इस सम्पूर्ण सृष्टि को जब मनुष्य अपनी कल्पना और सृजनशीलता से एक रूप देता है, तो यह दृश्यमान रूप ही कला कहलाती है। विभिन्न सांसारिक तत्वों में किसी पर भी कलाकार अपनी दृष्टि एकाग्र करता है और फिर उस भाव या विचार को मूर्तता प्रदान कर कला सृजित करता है।

मनुष्य अपने दैनिक जीवन में अनेकों क्रियायें करता है। इनमें से कुछ साधारण तरीकें से सम्पन्न होती है तथा कुछ क्रियाओं को करने में मानव विशेष कुशलता दिखाता है। इस प्रकार से विशेष कुशलतापूर्वक किये गये कार्य दूसरों को आकर्षित भी करते है और प्रभावित भी। ये आवश्यक नहीं है कि ये आकर्षक क्रियाये केवल मनुष्यों द्वारा ही सम्पन्न की जाती है बल्कि पशु–पक्षी भी कुछ ऐसी क्रियायें करते है, जो हमें अच्छी लगती है। ईश्वर के इस अनुपम दृश्य जगत में सारी चीजे कलामय है। मानव मात्र से इस सृष्टि का निर्माण नहीं होता इसमें वृक्ष पुष्प, पशु–पक्षी, सूर्य–चन्द्रमा सब आते है। प्रकृति के प्रांगण में प्रतिक्षण अनेक घटनाएँ घटित होती रहती है। जैसे– सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्रोदय, चाँदनी रात इन्द्रधनुष, खिलते हुये पुष्प, कल–कल शब्द करती हुयी सरिता, हिम से ढंके पर्वत शिखर आदि। चन्द्रमा के घटने–बढ़ने के आधार पर ही उसे सोलह कलाओं से युक्त माना गया है। गाय से प्राप्त होने वाले पदार्थ (पचं गत्य) को भी वैदिक युग में गाय की कलाएँ माना जाता था। सभी देवी–देवताओं अपने–अपने कार्य और प्रभावों को उनकी कला माना जाता है। इस प्रकार ये सम्पूर्ण जगत विविध कलारूपों में हर और अपने कलामय सौन्दर्य से हमें आकर्षित करता रहता है।

इस प्रकार से कला एक व्यापक शब्द रहा है, जिसका प्रयोग प्रकृति तथा मानव जीवन के विविध क्षेत्रों में होता रहा है। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में जीवन के चार प्रयोजन बताये गये है– अर्थ, काम, धर्म तथा मोक्ष द्य अतः मानव की कलाओं का उद्देश्य भी इन्हीं साधनों की प्राप्ति माना गया है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के चित्र सूत्र में इस प्रकार कहा गया हैं–

''कलानां प्रवरं चित्तं धर्मकामार्थमाक्षे दम्''। अर्थात् कला के द्वारा धर्म, काम, अर्थ एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार भारत में ''कला के लिए कला'' न होकर सम्पूर्ण जीवन के लिए कला को साधन माना गया है।''

जीवन के हर पहलू को स्पर्श कर उसे संवारने का मुख्य श्रेय कला को ही है, यहाँ तक कि वेद, वेदांग, काव्यकोश सभी में कला किसी न किसी रूप में अंतनिर्हित है। प्राचीन काल में भी कला मानव जीवन व उनके भावों की अभिव्यक्ति बनी हुयी थी। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त समस्त जीवन कला से ओतप्रोत था, यही कारण है कि सभी कौशल और कौतुहलों की परिगणना कला के अन्तर्गत होने लगी और धीरे–धीरे सारा युग कला में समाहित होने लगा।

दृश्य कलाएँ कितनी प्राचीन है और इसका आरम्भ कब और कहाँ से होता है, यह बहुत स्पष्ट है। सर्वप्रथम हमें श्रग्वदे में कला के मूलस्रोत प्राप्त होते है, जिनके अन्तर्गत वर्णलिपि व चित्तलिपि का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। कला का विकास यज्ञवेदियों की रेखानुकृतियों से आरम्भ हुआ। आज आधुनिक समय में कला कई रूपों में मानव भावनाओं की अभिव्यक्ति का उत्तम माध्यम बन गयी है, जिस प्रकार से यज्ञों में वर्णलिपि तथा चित्रलिपि का अविष्कार हुआ, उसी प्रकार से चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला, स्थापत्यकला, नृत्य–काव्य, संगीत एवं नाट्यकला का भी उद्भव हुआ। क्रमशः ये सभी ललित कलाओं के अन्तर्गत आती है।

समय के विकासक्रम के साथ कला के क्षत्रे में नित्य नये सृजन होते गया इसी श्रेणी मे ं अजन्ता के भित्ति चित्र है जो भारतीय कला के अविस्मरणीय संग्रहालय है। इनकी अति उच्चकोटि की कला को देखकर यह ज्ञात होता है कि बुद्ध के समय से पूर्व ही चित्रकला अत्यधिक विकसित हो चुकी थी। अजन्ता एलोरा के चित्र, खजुराहों की मूर्तियों, राजपूत व मुगल काल की कला बौद्धकला और गुप्तकाल में कला अति उन्नत थी, जो भारतीय कला परम्परा को और समृद्धि प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त राग–रागनियों से सम्बन्धित वातावरण, दृश्य, भाव व विषयों का ऐसा कोमलतापर्ण चित्रण किया गया है कि उसे देखने मात्र से राग–रागिनी के स्वरूप, प्रकृति, रस काल आदि का सम्पूर्ण ज्ञान हो जाता है। इन चित्रों के अन्तर्गत रागिनी केदार, रागिनी नट, राग मल्हार राग भैरव आदि के चित्रांकन यह प्रमाणित करते हैं कि किस प्रकार कलात्मक संयोजन के द्वारा विभिन्न कलाओं का संयोग उपस्थित हो जाता है।

कई लोग कला के केवल मनोरंजन का विषय मानते है, एक ऐसी वस्तु जो जीवन से अलग है, वास्तव में वे नहीं जानते है कि

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- III, Issues-29, YEAR- July-Sept.-2023

कला सीधे जीवन के तल में घुसकर देखती है और उसके रहस्यों की पर्ते उखाड़ फेंकती है। कला के अतिरिक्त कोई ऐसा माध्यम नहीं है, जो जीवन को भेदकर उसके मूल को प्रस्तुत कर सके। भारतीय कला का भी यही आदर्श रहा है।

मनोरंजन अथवा नेत्रों का विलास भारतीय कला का कभी भी लक्ष्य नहीं रहा है। विश्लेषण एवं अन्तर उद्‌बोधन की अपूर्व क्षमता भारतीय कला में सदैव रही है। अजन्ता एलोरा, बाघ, सित्तनवासल, तुर्किस्तान, बामिया और इनके अतिरिक्त पाल, जैन, मुगल, राजस्थानी व पहाड़ी चित्रकला में भारतीय जीवन को अत्यन्त गहराई के साथ प्रस्तुत किया गया है।

अर्न्‌तदृष्टि व यर्थाथ शैली के कारण 19वीं शताब्दी के अन्त तक लोगों का ध्यान कला के मर्म तक नही ं जा सका। अतः भौतिक दृष्टि से देखने वालों के लिए कला रहस्य एवं प्रतीक के आवरण से ढकी रही। इस कारण मार्शल तथा स्मिथ जैसे कला मर्मज्ञों ने यह धारणा बना ली कि गान्धार शिल्प रचना के बाद भारत में कोई गणनात्मक सृजन नहीं हुआ, लेकिन कुछ समय पश्चात् यह भ्रम टूट गया। डॉ० आनन्द कुमार स्वामी ई०वी० हैवेल व पर्सी ब्राउन आदि विद्वानों के प्रत्यनो ने भारतीय कला को अन्वेषण का विषय बना दिया। विश्व की कला में आज भारतीय कला का अत्यन्त सम्मानित स्थान है।

इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि– 19वीं शताब्दी के मध्य तक यूरोप की चित्रकला ग्रीक मान्यताओं से अनुप्रेरित थी। इस दृष्टि से अन्य देशों की भी कला मापी व परखी जाती थी। 19वीं शताब्दी के अन्त में फ्रांस में कला आन्दोलन शुरू हुआ और 20वीं शताब्दी के प्रारम्भिक 10–20 वर्षों तक आते–आते ऐसी उथल–पुथल शुरू हुयी जिससे सारी पुरानी मान्यतायें टूट गई।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अविनाश बहादुर ''भारतीय चित्रकला का इतिहास'' पृष्ठ संख्या–3.
2. ''कला निबंधन'' पृष्ठ संख्या–109.
3. सिंह एवम् यादव, प्रचीन भारतीय एवम् संस्कृति पृष्ठ संख्या–16.
4. डॉ0 चिरंजीतलाल झा, ''कला के मूल तत्व'' पृष्ट संख्या–14.

*****